Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2022 GISRRJ | Volume 5 | Issue 1 | ISSN : 2582-0095

वेदव्यास की रचना में स्त्री विमर्श महाभारत के सन्दर्भ में (आज के संदर्भ में)

डॉ. रमेश चन्द्र टांक
शोधार्थी, सीनियर रिसर्च फेलो ,ICSSR संस्थान।

Article Info
Volume 5, Issue 1
Page Number : 25-35

Publication Issue :
January-February-2022

Article History
Accepted : 01 Feb 2022
Published : 07 Feb 2022

सारांश- भारतीय संस्कृति के प्राचीन ग्रन्थों में मनुष्य के आचार-विचार, व्यवहार का जैसा सूक्ष्म विवेचन हुआ है, अन्यत्र दुर्लभ है। रामायण और महाभारत इन दो ग्रन्थों में प्रारम्भ से लेकर अन्त तक कर्म का ही अन्तर्द्वन्द्व छाया हुआ है। केवल मुख्य कथा ही नहीं, उपकथाओं और आनुषङ्गिक वर्णनों में भी कर्म, अकर्म, विकर्म का वही द्वन्द्व तैरता हुआ नजर आता है। यथार्थ में कर्म की गहन गति का चित्रण एवं विश्लेषण महाभारत जैसे पञ्चम वेद में इतने मुखर और स्पष्ट रूप में हुआ है कि इस ग्रन्थ की तेजस्विता के सम्मुख अन्य ग्रन्थ फीके पड़ जाते हैं। महर्षि वेदव्यास की यह विशेषता रही है कि जिस विषय का भी उन्होंने स्पर्श किया है- वह चाहे कर्मफल हो, मृत्यु हो, शौच, इन्द्रियनिग्रह, सांसारिक-विषय, सुख-दु:ख, पाप-पुण्य, जय-पराजय, अथवा मनुष्य का प्रारब्ध, कर्मों का प्रायश्चित अथवा हत्या और आत्महत्या का विषय ही क्यों न हो-उसे अन्तिम क्षितिज तक पहुँचा दिया है। विषय की वे इतनी स्पष्ट और विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत करते हैं कि उस विषय में पुन: कुछ कहने की आवश्यकता शेष नहीं रह जाती है। महाभारत में वैद व्यास द्वारा महापुरूषों की भूमिका का वर्णन सम्यक रूप से किया गया है उदाहरणार्थ श्रीकृष्ण, भीष्म, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, शल्य, कर्ण के साथ-साथ पांचों पांडवों एवं कौरवों की भूमिका का वर्णन भी महर्षि वेद व्यास ने महाभारत कालीन समाज में समयक रूप से किया था इसी क्रम में स्त्री पात्रों को अन्तर्गत गांधारी, कुन्ती, माद्री, सुभद्रा, भानुमति, द्रोपति इत्यादि स्त्री पात्रों की भूमिका का सम्यक विवेचन महर्षि वेद व्यास ने तत्कालीन समाज में किया था। इसी स्त्री विमर्श को महाभारत कालीन परिप्रेक्ष्य में दृष्टिगत रखते हुए आधुनिक संदर्भ में प्रस्तुत शोध आलेख में स्त्री विमर्श को व्याख्यायित किया गया है।

मुख्य शब्द- महाभारत, वेद व्यास, स्त्री, पंचमवेद, लोककल्याण।

महाभारत का परिचय- महाभारत एक महान् विश्वकोषात्मक ग्रंथ है। यह ग्रन्थ वाल्मिकि रामायण से चार गुना तथा होमर रचित इलियड एवं ओडेसी की संयुक्त काया से प्राय: आठ गुना बड़ा है। मूलकथा तो पंचमांश में ही है, अवशिष्टांश तो औपदेशिक कथाओं एवं कथनों से आपूरित है। धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष के संबंध में जिन-जिन विषयों का समावेश महाभारत में हुआ है। वे ही अन्य ग्रंथों में प्राप्त होते है और जो विषय इसमें नहीं है, वे अन्यत्र भी नहीं उपलब्ध होते।

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ।

यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत्क्वचित् ।

महाभारत की पावन कथा वेदव्यास की देन है। उपजीव्य काव्य रामायण के पश्चात् की यह कथा है, जिसमें कौरव–पाण्डवों के पारिवारिक द्वैष का वर्णन है। पर इस कथा के अतिरिक्त भी अनेक अनमोल रत्न व्यास जी ने इसमें भर दिये हैं। कथा तो ऐसी है, मानों आज की है और हमेशा आज की रहेगी। रामायण में जो पवित्रता का वातावरण था। वह वातावरण इसमें कही नहीं मिलता है। शायद इसी कारण हमारे पूजाघरों में रामायण का तो सहज प्रवेश है, पर महाभारत का नहीं। 'पंचमवेद' कहा जाने वाला महाभारत हमारेअन्त:करण को शुद्ध करता है।

हिमालय के अपने आश्रम में वेदव्यास जी ने 'महाभारत' के स्वरूप का निर्माण किया। स्वयं ब्रह्मा जी ने इसे सर्वश्रेष्ठ काव्य कहा है। वेदव्यास दूरदृष्टि रखते थे। उन्होंने अपनी तपस्या को सार्थक करने के उद्देश्य से इसका प्रचार–प्रसार करना चाहा।

'महाभारत' की पावन कथा उनके मानव–पटल पर अंकित हो चुकी थी पर संसार में इसका प्रचार कैसे हो, उनके शिष्य इसका अध्ययन कैसे करेंगे।

वेदव्यास के अंत के साथ इस कथा का अंत हो जाता, तो हम इस युगान्तकारी कथा से अनजान ही रह जाते। लोककल्याण के लिये उन्होंने इस महाकाव्य को लिपिबद्ध करने के लिये ब्रह्मा जी से उचित लेखक चुनने का सहयोग माँगा। ब्रह्माजी ने गणेश जी का स्मरण करने को कहा। इस प्रकार गणेश जी के द्वारा यह कथा लिपिबद्ध हुई।

वेदव्यास ने सर्वप्रथम 'जय' नाम से इसको लिखा था। 'महाभारत' के मंगल श्लोक में नारायण, नर एवं सरस्वती देवी की वंदना करते हुए 'जय' नामक काव्य के पठन का विधान है। यह नाम ऐतिहासिक है और महाभारत का मूलरूप है। कौरवों पर पांडवों के विजय के कारण ही इसका नामकरण 'जय किया गया। कुरूक्षेत्र के युद्ध के पश्चात् महर्षि व्यास ने इस आख्यान का उपदेश अपने शिष्य वैशम्पायन को दिया। इसमें 8800 श्लोक थे। इसमें शुद्ध रूप से कुरू–पांचालो का वंश–वर्णन एवं कौरव–पाण्डवों के कलह का वर्णन था।

"जय' के अनन्तर "भारत संहिता' नाम से व्यास जी ने चौबीस हजार श्लोक वाली संहिता बनाई, इसमें उपाख्यान भाग नहीं थे। यह दूसरा संस्करण था।

'महाभारत' की कथा को लोमहर्षण के पुत्र सौति उग्रश्रवा ने जनमेजय के सर्प–सत्र में सुना था। नैमिषारण्य में सौति ने यह कथा शौनक आदि ऋषियों एवं अन्य श्रोताओं को सुनाई थी। उपस्थित जनों के सहयोग से और उनके प्रश्नोत्तरो से इसके कलेवर में वृद्धि हुई। यह तीसरा संस्करण ' महाभारत' नाम से जाना गया। यह उपाख्यानों से युक्त था। इसमें श्लोकों की संख्या 1 लाख हो गई। इसमें परिशिष्ट के रूप में 'हरिवंश' का भी समावेश हैऔर यह संयुक्त होकर ही 1 लाख श्लोकों की संख्या बनाते है।

'महाभारत' संस्कृत महाकाव्यपरम्परा में 'द्वितीय' महाकाव्य हैं। इससे पूर्व महर्षि–वाल्मिकि ने रामायण की रचना की। निश्चित रूप से रामायण को पढकर महर्षि व्यास ने प्रेरणा ग्रहण की होगी। रामायण धर्म ग्रन्थ के रूप में सम्मानित हैं। तो महाभारतकार ने अपनी भुजाएं उठाकर कहा

ऊर्ध्वबाहु विरोम्येष न कश्चिच्छृणोति माम् ।

धर्मादर्थश्च कामश्च स धर्म: किं नु सेव्यते।।

अर्थात् में भुजा उठाकर कहता हूँ, कोई मेरी बात सुनने को तैयार नहीं, धर्म को अपनाओं धर्म से ही अर्थ भी प्राप्त होता हैं, और धर्म से काम भी प्राप्त होता हैं। जनहित के लिए अपने हित का बलिदान करना और अन्यायी के प्रति रोष व्यक्त करना यही धर्म का मूल है।

महाभारत तो त्यागियों और बलिदानियों की क्रीडास्थली ही है। ग्रन्थ के प्रारम्भ में ही धौम्य मुनि के तीन शिष्यों– आरूणि, पाञ्चाल, उपमन्यु और वेद–इन तीन शिष्यों की तपस्या और त्याग का उल्लेख है। ततपश्चात महाभारत में महापराक्रमी भीष्म का चरित्र त्याग और बलिदान का अपूर्व उदाहरण है। पिता की इच्छापूर्ति के लिए युवावस्था में ही जिन्होंने सम्पूर्ण सांसारिक भोगों का सदा सर्वदा के लिए त्याग कर जीवन–पर्यन्त अखण्ड ब्रह्मचर्यव्रत धारण किया। इतना ही नहीं जिन्होंने भविष्य के किसी अनिष्ट की आशंका से कुलक्रमागत राज्यसिंहासन का भी त्याग कर दिया, उन जगद्वन्द्य गङ्गानन्दन की त्यागमयी मूर्ति भारत के मानस पर अमिट रूप से सृष्टिपर्यंत अंकित रहेगी।

भारतीय संस्कृति के प्राचीन ग्रन्थों में मनुष्य के आचार–विचार, व्यवहार का जैसा सूक्ष्म विवेचन हुआ है, अन्यत्र दुर्लभ है। रामायण और महाभारत इन दो ग्रन्थों में प्रारम्भ से लेकर अन्त तक कर्म का ही अन्तर्द्वन्द्व छाया हुआ है। केवल मुख्य कथा ही नहीं, उपकथाओं और आनुषङ्गिक वर्णनों में भी कर्म, अकर्म, विकर्म का वही द्वन्द्व तैरता हुआ नजर आता है। यथार्थ में कर्म की गहन गति का चित्रण एवं विश्लेषण महाभारत जैसे पञ्चम वेद में इतने मुखरऔर स्पष्ट रूप में हुआ है कि इस ग्रन्थ की तेजस्विता के सम्मुख अन्य ग्रन्थ फीके पड़ जाते हैं। महर्षि वेदव्यास की यह विशेषता रही है कि जिस विषय का भी उन्होंने स्पर्श किया है– वह चाहे कर्मफल हो, मृत्यु हो, शौच, इन्द्रियनिग्रह, सांसारिक–विषय, सुख–दु:ख, पाप–पुण्य, जय–पराजय, अथवा मनुष्य का प्रारब्ध, कर्मों का प्रायश्चित अथवा हत्या और आत्महत्या का विषय ही क्यों न हो–उसे अन्तिम क्षितिज तक पहुँचा दिया है। विषय की वे इतनी स्पष्ट और विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत करते हैं कि उस विषय में पुन: कुछ कहनेके लिए शेष ही नहीं रह जाता। अत: भगवान् कृष्ण द्वैपायन के इस महाभारत रूपी समद्र में 'कर्म' की जो लहरें तरङ्गित हो रही हैं, उन लहरों में तैरते हुये मुगों, मोतियों (सीपों) और शङखों को बटोरने का मैं प्रयास करूंगा। इसी क्रम में महाभारत के प्रणेता महर्षि वेदव्यास के जीवन अध्ययन के परिचय का विवरण इस प्रकार है।

महाभारतकार वेदव्यास का जीवन परिचय

पराशर पुत्र वेदव्यास महाभारत के प्रणेता और पुराणों के रचनाकार के रूप में विख्यात हैं। "देवीभागवत' में उल्लेख हैं कि कष्ण द्वैपायन वेदव्यास से पूर्व 28 व्यास थे और प्रथम व्यास स्वयं ब्रह्माजी थे। 'देवीभागवत' में इन 28 व्यासों के नामोल्लेख हैं, जो क्रमश: इस प्रकार हैं –

प्रथम द्वापर में ब्रह्माजी, दूसरे द्वापर में प्रजापति, तीसरे द्वापर में उशना, चौथे में बृहस्पति, पांचवे द्वापर में सविता, छठे द्वापर में मृत्युदेव, सांतवे द्वापर में मघवान, आठवे द्वापर में वसिष्ठ, नवें में सारस्वत, दसवें द्वापर में विधामाने, ग्यारहवें द्वापर में त्रिवृषन, बारहवें द्वापर में भारद्वाज, तेरहवें द्वापर में अन्तरिक्ष, चौदहवें द्वापर में धर्म, पन्द्रहवें द्वापर में त्रथ्यारूणिन, सोलहवें द्वापर में धनजंय, सत्रहवें द्वापर में मेधातिथि, अठारहवें द्वापर में व्रती, उन्नीसवें द्वापर में अत्रि, बीसवें द्वापर में गौतम, इक्कीसवें द्वापर में हर्यात्मा ने व्यास का कार्य सम्पादन किया। वजाश्रवा वेन, आमुष्यायण सोम, तृणबिन्दु, भार्गव, शक्ति, जातुकर्ण्य और कृष्णद्वैपायन भी व्यासों में परिगणित थे। अत: स्पष्ट हैं कि 'व्यास' एक उपाधि हैं। त्रेता युग के पश्चात् द्वापर युग का प्रतिनिधित्व वेदव्यास करते हैं।[2] व्यास वाल्मिकी के पश्चात् हुए क्योंकि महाभारत के पूर्व ही रामायण की रचना हो चुकी थी और महाभारत के वनपर्व के अठारह अध्यायों में 'रामोपाख्यान पर्व हैं, जिसमें संक्षेप में राम की कथा वर्णित हैं। जिससे सिद्ध होता हैं कि महाभारत रामायण के पश्चात् लिखा गया हैं।'[3]

हम सौभाग्यशाली हैं कि वेदव्यास जी ने स्वयं महाभारत में स्वजीवन परिचय दिया हैं –

एवं द्वैपायनो यज्ञे सत्यवत्यां पराशरात्।

न्यस्तो द्वीपे स यद् बालस्तस्माद् द्वैपायन:स्मृत: ।।[4]

अर्थात् महर्षि पराशर द्वारा सत्यवती के गर्भ से द्वैपायन व्यास जी का जन्म हुआ। वे बाल्यावस्था में ही यमुना के द्वीप में छोड़ दिए गये, इसलिये 'द्वैपायन' नाम से प्रसिद्ध हुए।

प्रथमत: इन्होनें अपने आप को नारायण का पुत्र कहा हैं –

तमादिकालेषु महाविभूतिर्नारायणो ब्रहा महानिधानम् ।

ससर्ज पुत्रार्थमुदारतेजा व्यासं महात्मानमजं पुराणम् ।।"[5]

अर्थात् प्राचीनकाल में उदार, तेजस्वी, महान, वैभवसम्पन्न भगवान् नारायण ने वैदिक ज्ञान की महानिधिरूप महात्मा अजन्मा और पुराणपुरूष व्यास जी को अपने पुत्र रूप से उत्पन्न किया था।

किन्तु अधिकांश साक्ष्य इन्हे पराशर मुनि एवं सत्यवती के पुत्र सिद्ध करते **हैं। 'ब्रह्म पुराण[6], 'वायु पुराण'[7], 'कूर्म पुराण[8]. 'देवी भागवत[9]** में पराशर पुत्र व्यास का उल्लेख हैं।

'विष्णु पुराण'[10] 'वायुपुराण'[11]. 'पद्मपुराण, 'देवी भागवत[12] में उनके सत्यवती के पुत्र होने का उल्लेख हैं।[13]

'महाभारत' में वेदव्यास ने स्वयं अपना जीवन परिचय दिया हैं। वेदव्यास ऋषि पराशर के पुत्र थे। पराशर के पिता का नाम शक्ति तथा माता का नाम अदृश्यन्ती था। वशिष्ठ जी पराशर मुनि के दादा थे।[14] ऋषि पराशर मल्लाह पुत्री पर अनुरक्त हो उसके साथ समागम की इच्छा प्रकट करते हैं। मल्लाह पुत्री सत्यवती और मुनि पराशर के संयोग से व्यास का जन्म हुआ।"[15]

'महाभारत' में वेदव्यास सर्वत्र दिखते हैं लेकिन एक धीवरकन्या के गर्भ से पैदा होकर इस महान् गौरव को उन्होनें कैसे अर्जित किया, इसका सुनियोजित उल्लेख नहीं मिलता हैं।"देवीभागवत' में व्यास जी का पुत्र प्राप्ति के लिये कठोर तपस्या करने का उल्लेख मिलता हैं। अरणि मंथन से उत्पन्न शुकदेव को व्यास जी भागवत की शिक्षा देते हैं, इसका उल्लेख भी हैं।[16]

महाभारत के शांतिपर्व में व्यास जी का पुत्र प्राप्ति के लिये तपस्या और भगवान शंकर से पुत्र वर–प्राप्ति का उल्लेख हैं।[17] ज्ञानी व्यास अपने पुत्र को सबसे पहले 'महाभारत' का अध्ययन कराते हैं।[18] शुकदेव की मृत्यु पर रोदन करते हुए पिता व्यास का भी उल्लेख हैं।[19]

वेदव्यास पराशर मुनि और सत्यवती पुत्र होने के साथ–साथ कौरवों–पाण्डवों के दादा भी रहे। सम्पूर्ण 'महाभारत' में व्यास जी ने एक स्नेहरत परामर्शदाता की भूमिका निर्वहन की हैं।[20] वंश नहीं बढ़ने की चिंता में सत्यवती ने अपने पुत्र वेदव्यास से नियोग विधि से पुत्र उत्पन्न करने को कहा।"[21] और सत्यवती के पुत्र व्यास जी ने मातृऋण चुकाया। विचित्रवीर्य की निसंतान मृत्यु हो जाने के पश्चात् सत्यवती ने व्यास जी को हस्तिनापुर बुलाया। मुनि व्यास जंगलो से महलों में आए और माता के निरंतर आग्रह के कारण वह विचित्रवीर्य की पत्नियों के साथ नियोग करने का तैयार हो गये –

वेत्थ धर्म सत्यवति परं चापरमेव च।।

तथा तव महाप्राज्ञे धर्मे प्रणिहिता मति:।

तस्मादहं त्वन्नियोगाद् धर्म मुद्दिश्य कारणम् ।।

ईप्सितं ते करिष्यामि दृष्टं ह्येतत् सनातनम् ।

भ्रातु: पुत्रान् प्रदास्यामि मित्रावरुणयो: समान् ।। [22]

वेदव्यास ने कहा मैं आपकी आज्ञा से धर्म को ही दृष्टि में रखकर आपकी इच्छा के अनुरूप कार्य करूँगा। यह सनातन मार्ग शास्त्रों में देखा गया है। मैं अपने भाई के लिये मित्र और वरूण के समान तेजस्वी पुत्र उत्पन्न करूँगा।

व्यास जी की कृपा से अम्बिका से धृतराष्ट्र, अम्बालिका से पाण्डु और दासी से विदुर उत्पन्न हुए। व्यास जी के रूप को देखकर अम्बिका ने भयभीत होकर आँखे मूंद ली थी, जिस कारण धृतराष्ट्र अंधे पैदा हुए। माता के आग्रह से व्यास जी ने पुन: अम्बालिका से नियोग विधि से समागम किया और डर से पीली पड़ी अम्बालिका ने अरूण और पीत वर्ण के पाण्डु को

जन्म दिया। सत्यवती ने पुन: अम्बालिका को व्यास जी की सेवा में नियुक्त किया पर उनके कुत्सित रूप को याद कर अम्बिका ने अपनी दासी को उनकी सेवा में भेजा। दासी की सेवा से संतुष्ट व्यास जी ने एक बुद्धिमान और धर्मात्मा बालक के उत्पन्न होने को भविष्यवाणी की और विदुर उत्पन्न हुए। इस तरह अपनी माता की आज्ञा का पालन कर व्यास जी पुन: अपने आश्रम में चले गये। ब्रह्मचारी होकर भी जिस सम्मान और गौरव से व्यास जी ने इस धर्म को निभाया वह स्मरणीय हैं।

समाजशास्त्र एवं संस्कृत साहित्य

सामान्य भाषा मे समाज का अर्थ व्यक्तियों के समूह या झुण्ड से होता है इसी अभिप्राय से आर्य समाज, बह्म समाज, प्रार्थना समाज, धर्म समाज, हिन्दू समाज, महिला समाज आदि शब्दों का प्रयोग किया जाता है।

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से समाज व्यक्तियों का झुण्ड नहीं बल्कि सामाजिक सम्बन्धों का जाल है। एक व्यक्ति समाज में रहकर अनगिनत सम्बधता स्थापित करता है। वह परिवार का सदस्य होकर अपने सगे सम्बन्धियों से रक्त सम्बन्ध स्थापित करता है। कही पति पत्नी का नाता तो किसी से भाई – भाई का सम्बन्ध है तो किसी से पिता –पुत्र का सम्बन्ध है कोई चाचा है तो कोई ताऊ है कोई भाई है कोई बहिन है। सबके सम्बन्ध सबके साथ अलग –अलग है। वहीं व्यक्ति जब शिक्षण संस्था का सदस्य होता है तो गुरू, शिष्य, मित्र – शत्रु के सम्बन्ध अनेक व्यक्तियों से स्थापित होते है।

इस प्रकार विभिन्न क्षेत्रों में असंख्य सम्बन्ध स्थापित होते हैं और सम्बन्धों को एक जाल सा बिछ जाता है। कहीं रक्त का सम्बन्ध है, तो कही शिक्षा का सम्बन्ध है कही आर्थिक सम्बन्ध है तो कही धार्मिक सम्बन्ध, कहीं राजनैतिक सम्बन्ध है तो कही वैयक्तिक शत्रुता – मित्रता) सम्बन्ध है। इन्ही सामाजिक सम्बन्धों का अध्ययन करना समाज शास्त्र का उद्देश्य है।

समाजशास्त्र अर्थ, क्षेत्र और विषयवस्तु

मनुष्य सदियों से समाज और विभिन्न समूहों में रहता चला आया है। सर्वप्रथम उसने प्राकृतिक घटनाओं तथा पर्यावरण का अध्ययन किया जिसके परिणामस्वरूप प्राकृतिकविज्ञानों का जन्म हुआ। इसके बाद मनुष्य ने स्वयं अपने समाज के अन्तर्गत सामाजिक जीवन, सामाजिक घटनाओं व समस्याओं के बारे में सोचना प्रारम्भ किया जिसके कारण सामाजिक विज्ञानों का विकास हुआ। मनुष्य के सामाजिक जीवन को अपनी विषयवस्तु मानकर विभिन्न सामाजिक विज्ञान विकसित हुए जिनमें से एक समाजशास्त्र है।

टी बी वोटोमोर ने लिखा है, समाजशास्त्र एक शताब्दी से अधिक पुराना नही है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है जो समाज में रहकर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। मनुष्य की प्रगति समाज पर ही निर्भर होती है। अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मनुष्य एक दूसरे के साथ अनेक प्रकार के सम्बन्ध से सम्बन्धित रहते हैं। मनुष्य के आर्थिक, राजनीतिक, नैतिक, कानूनी, मनोवैज्ञानिक, धार्मिक आदि सम्बन्धों के आधार पर अर्थशास्त्र, राजनीति शास्त्र, कानूनशास्त्र, धर्मशास्त्र, मनोविज्ञान, नीति शास्त्र आदि विज्ञानों का विकास हुआ है। यह सभी सामाजिक विज्ञान मनुष्य के किसी विशिष्ट पक्षका अध्ययन करते हैं, इसलिए विशिष्ट विज्ञान कहलाते है।

कहाँ समाजशास्त्र सामाजिक मनोविज्ञान बन जाता है और कहाँ सामाजिक मनोविज्ञान समाजशास्त्र बन जाता है और कहाँ अर्थशास्त्र का सिद्धान्त समाजशास्त्रीय सिद्धान्त बन जाता है अथवा जैविकीय सिद्धान्त समाज शास्त्रीय सिद्धान्त बन जाता है।

समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य

समाज में विभिन्न प्रकार की घटनायें घटित होती रहती है। इनसे प्रभावित होकर समाज में विभिन्न विज्ञानों का अध्ययन प्रारम्भ हुआ। समाज में एक ही तथ्य या घटना का विभिन्न विज्ञान अध्ययन करते है, परन्तु हर विज्ञान अपनी विशिष्टता एवं अस्तित्व की रक्षा हेतु अपने नजरिये या दृष्टिकोण से अध्ययन करता है जो उन्हें एक दूसरे से भिन्न प्रदर्शित करता है।

'परिप्रेक्ष्य' को शाब्दिक अर्थ में हम समझे तो यह कह सकते है कि प्ररिप्रेक्ष्य अग्रेजी शब्द Perspective का हिन्दो रूपान्तरण है। Perspective लैटिन भाषा के पसपैक्ट से बना है जिसका अर्थ है आद्योपान्त देखा गया होता है।

सरल भाषा में परिप्रेक्ष्य का अर्थ एक ओर से दूसरी ओर देखना है। जबकी वैज्ञानिक अपने विषय की किसी तथ्य या घटन का विशेष उद्देश्य को दृष्टिगत रखते हुए है।

समाजशास्त्र की परिभाषये :-

मेकाइवर एवं पेज के अनुसार - सनाजशास्त्र सामाजिक सम्बन्ध अथवा सामाजिक सम्बन्धों के बारे में अध्ययन करता है, जिसे हम समाज कहते है।

वार्द के अनुसार :- "समाजशास्त्र समाज का विज्ञान है।"

शिलिन एवं गिलिन के अनुसार :- समाज में रहने वाले व्यक्तियों की अन्त:क्रियाओं का अध्ययन समाजशास्त्र है।

रॉस के अनुसार :- "सामाजिक तथ्यों का विज्ञान समाजशास्त्र है।"

समाजशास्त्र का क्षेत्र

समाजशास्त्र के अन्तर्गत अनेक ऐसे सिद्धान्त हमारे समक्ष आते हैं जिनका अध्ययन अर्थशास्त्र, सामाजिक मनोविज्ञान प्राणिशास्त्र आदि में किया जाता है। समाजशास्त्र सम्पूर्ण समाज का अध्ययन करता है इसलिये इसका अन्य सामाजिक विज्ञानों की सीमाओं में प्रविष्ट हो जाना स्वाभाविक बात है।

इस सम्बन्ध में कालबर्टन के विचार अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। वे लिखते है कि चूंकि समाजशास्त्र इतना लचीला विज्ञान है, यह निश्चित करना कठिन है कि कहाँ इसकी सीमाएँ आरम्भ होती है और कहाँ समाप्त होती है।

सामजशास्त्र सामाजिक मनोविज्ञान बन जाता है और कहाँ इसकी सीमाएं सामाजिक मनोविज्ञान समाजशास्त्र बन जाता है और कहाँ अर्थशास्त्र का सिद्धान्त समाजशास्त्रीय सिद्धान्त बन जाता है अथवा जैविकीय सिद्धान्त समाजशास्त्रीय सिद्धान्त बन जाता है।

संस्कृत साहित्य की शास्त्रीय परम्परा

संस्कृत भाषा भारतीय संस्कृति एवं भारतीयता का प्राण तत्व है, इसी भाषा में भारत का मनन, चितंन, ग्वेषण एवं अनुभव संचित है। संस्कृत का इतिहास ही भारत का इतिहास है। वैदिक काल में अक्षुण्ण प्रवाहित इस भाषा में प्राचीन भारतीय ज्ञान का भण्डार सम्मिलित है। संस्कृत शब्द का अर्थ है - परिष्कृत, निर्दोष, निर्मल तथा शुद्ध। अपने औदात्य के कारण ही यह देवभाषा या गीर्वा वाणी के नाम से व्यक्त हुई। भारतीयों के सभी धर्मग्रन्थ, पुराण, रामायण, महाभारत, स्मृतियाँ, दर्शन, धर्मशास्त्र महाकाव्यकाल, नाटक, गध काव्य, गीतिकाव्य, गणित, ज्योतिष नीति, काम, आयुर्वेद, कृषि अर्थशास्त्र, राजनीति, इतिहास छन्द कोशग्रन्थ आदि सभी सस्कृत भाषा में ही उचित है।

ज्ञान विज्ञान का ऐसा कोई अंग नही जो संस्कृत में न हो। विश्व का प्राचीनतम साहित्य इसी भाषा में है। भारोपीय परिवार की यह सबसे प्राचीन व प्रमुख भाषा है जिसके बिना वैज्ञानिक अध्ययन असंभव है। संस्कृत मानवजाति की धरोहर है। इसकी व्यापकता आन्तरिक सम्भूति एवं कमनीयता एवं मूल्यावलम्बन इसके महत्त्व को बढ़ाते हैं। प्रबुद्ध भारतीय विचार दर्शन, धर्म, संस्कार, ज्ञान, विज्ञान की अनुपम उपलब्धि के मर्म को समझने के लिए संस्कृत ज्ञान अपरिहा है। संस्कृत वाङमय निम्न रूपों में प्राप्त है। वैदिक साहित्य, पुराण साहित्य, आर्ष साहित्य, ललित साहित्य तथा शास्त्रीय साहित्य। शास्त्रीय साहित्य में धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र, नीतिशास्त्र, दर्शनशास्त्र, कामशास्त्र, वास्तुशास्त्र• नाट्यशास्त्र, काव्यशास्त्र, संगीतशास्त्र, आयुर्वेद शास्त्र, गणितशास्त्र, ज्योतिषशास्त्र, कृषिशास्त्र के अतिरिक्त पशुपालन शालिहोत्र गजाश्वशास्त्र, वनस्पति शास्त्र, भूभर्ग शास्त्र, जीव शास्त्र व 64 कलाओं से सम्बन्धित विविध शास्त्रीय साहित्य उपलब्ध होता है।

"ऋषीणांमाघानां गहनमननावाप्त सुयशा:
श्रुतीना शास्त्राणां निखिलगुण - तत्वार्थनिलया।
पुरातत्वाधारा सकलभाव: ज्ञानाधिविभवा
जयेद देववाणी त्रिभुवन मनोज्ञा बुधप्रिया।।"

संस्कृत साहित्य के क्षितिजान्त प्रागंण में गघ एवं पघ की गंगा यमुना धारा सुदीर्घ काल से प्रवाहित होती रही है। यह अविरल धारा "तमसो मा ज्योतिर्गमय' अर्थात् अधकार से प्रकाश की ओर अज्ञान से ज्ञान की ओर ले जाने का प्रबल माध्यम है। इस विशाल ज्ञानरूपी सागर का प्रयोग करके अनेक विद्वान, विविध मनीषी कविवृन्द अपने प्रतिभचक्षु से स्वमनोनुकुल ज्ञान गुच्छको प्राप्त कर नि:श्रेयस की प्राप्ति करते है।

साहित्य विचार अभिव्यक्ति का पावन माध्यम एवं संस्कृत साहित्य उच्च गिरिश्रृंग है जिस पर चढ़कर मनुष्य सुदीर्घ स्त्रोत से बड़ी दूर तक देख सकता है। इस महानद के तट पर मनुष्य के उत्थान व पतन के अनेक चिन्ह दिखाई देते हैं।

संस्कृत साहित्य में रामकथा, कृष्णकथा और महाभारत की कथा पर अनेक काव्यों की रचना हुई है। राम और कृष्ण जहाँ सर्वदा श्रद्धेय है वही महाभारत के पात्र एक अनुभव की वस्तु है। पाठक महाभारत की कथा को पढते – पढ़ते उसमें प्रवेश कर चुका होता है तो उसके लिए वह समय और यह समय में कोई भेद नहीं रह जाता है।

इस प्रकार विश्व में प्राचीन कला – विधान की दृष्टि से श्रेष्ठतम साहित्य का संस्कृत अक्षय कोष है। वैदिक साहित्य, दर्शन, धर्मशास्त्र विज्ञान आदि जीवन का ऐसा कोनसा क्षेत्र नहीं है जिसका साहित्य संस्कृत में नहीं है। इसका अपार ज्ञान भण्डार हिन्द महासागर से भी गहरा भारत के भौगोलिक विस्तार से भी व्यापक एवं हिमालय के शिखरों से भी अधिक ऊँचा एवं ब्रह्मा की प्रकल्पना से भी अधिक सूक्ष्म है।

यह दिव्या वाक् संस्कृत भाषा अनादि काल से ही अनवरत रूप से सहृदयों को सानुभूति कराने में समर्थ रही है। यह सरिता प्राचीन काल से अविच्छन्न विशाल धारा के रूप में निरन्तर विद्यमान है, जिसके प्रमाण वाल्मीकि, व्यास, महारूवि भास, कालिदास, शूद्रक, भवभूति, विशाखदत एवं आधुनिक अनेक संस्कृत साहित्यकार रहे हैं जिन्होनें अनेक साहित्यों का सृजनकर संस्कृत वाङ्मय में श्री वृद्धि की है।

वैदव्यास की रचना में स्त्रीविमर्श आज के सन्दर्भ में -

महाभारत के संदर्भ में

महर्षि वेदव्यास द्वारा रचित आदिकाव्य महाभारत सम्पूर्ण साहित्यशास्त्र का प्रतिनिधित्व करता है, पारिवारिक विवादो से उपजी अराजकता का चित्रण सहज एवं प्रेरक तरीके से महाभारत में किया गया है। सांसारिक विद्रूपताओं से उत्पन्न अशांति एवं असतोष को महर्षि व्यास ने अपने महाकाव्य का विषय बनाकर सम्पूर्ण काव्य को प्रेरणास्पद एवं अनुकरणीय बनाया है। महाभारत के सन्दर्भ में श्लोक प्रसिद्ध है –

यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्।

(महाभारत/ स्वगोरोहण पर्व /05/50)

अर्थात जो महाभारत में है वही सम्पूर्ण जगत् में व्याप्त है और जो महाभारत में नहीं है वह कहीं भी नहीं है। हजारों वर्षों से पहले त्रिकालज्ञ महर्षि व्यास ने वर्तमान में उत्पन्न होने वाली स्थितियों को भापकर समाज से जुड़े उन सभी पहलुओं को अपने विशालतम् काव्य में सम्मिलित किया जो आज भी प्रेरणादायक होकर समायानुकूल प्रतीत होते हैं।

प्राचीनकाल में लिखे गये काव्य अधिकांश पुरूष प्रधान होते थे परन्तु महाभारत ऐसी रचना है जिसमें स्त्री व पुरूष को समान अधिकार दिये गये हैं। इस रचना में स्त्रियों को भोग की वस्तु न समझकर पुरूषों के समकक्ष माना गया है, और यह सिद्ध किया गया कि एक स्त्री पर ही सम्पूर्ण परिवार का उत्तरदायित्व होता है। यदि स्त्री चाहे तो परिवार को बाँधकर सभी सदस्यों का मार्ग प्रशस्त्र कर सकती है और वह चाहे तो परिवार को पतन के गर्त में डाल सकती है।

महाभारत का प्रत्येक पात्र कोई न कोई प्रेरणा अथवा सबक अवश्य देता है इन्ही चरित्रों के माध्यम से महर्षि वेदव्यास आज की नारियों को संदेश देते हुए नजर आते हैं।

गांधारी के माध्यम से आधुनिक नारी के संदेश :-

कुरुवंशी राजा धृतराष्ट्र की पत्नी, कौरवों की माता हस्तिनापुर की महारानी गांधार नरेश की पुत्री धूतक्रीडा विशेषज्ञ शकुनि की बहन इन सभी उपनामों से सुशोभित गौरवमयी गांधारी का चरित्र आज भी नारियों को कई शिक्षाएँ देता है। गांधारी को जब पता चला कि उसका पति जन्मान्ध है तब वे श्रेष्ठ पतिव्रताओं की तरह अपनी आँखों पर पट्टी बांध लेती है।'[23] यह सोचकर कि जब पति ही संसार को नही देख पा रहे हैं तो में क्यों देखू? जबकि होना यह चाहिए था कि गांधारी अपने पति के नेत्रों की ज्योति बनती, पति असक्षम वे तो वे अपने पुत्रों को श्रेष्ठ व्यक्तित्व सम्पन्न संस्कारों से सुशोभित करके उन्हें प्रेम व सहयोग का पाठ पढ़ाकर उनके श्रेष्ठ व्यक्तित्व का निर्माण कर सकती थी ताकि सौ पुत्रों की माता होने पर उन्हें पुत्र वियोग नहीं सहना पड़ता।[24]

व्यास जी ने गांधारी के माध्यम से आज की नारियों को यही संदेश देते है कि सहीऔर गलत के न्याय की स्थिति में निरूत्तर नहीं हो जाना चाहिए। आँखों पर पट्टी बाधने से तात्पर्य कपडे की चन्दतहों से न होकर सब कुछ देखते हुए भी समय रहते उसमें सुधार नही करने से है।

आज भी आधुनिक कहलाने वाली नारी अपने कर्तव्यों की इतिश्री गांधारी की तरह ही कर लेती है। आधुनिकता की पट्टी बाँधे वह पारिवारिक दायित्वों की उपेक्षा करती है। एक मशीन की तरह पैसा कमाने की दौड़ एवं हौड में अपनी परम्पराओं और संस्कारों को अनदेखा करती है। महर्षि व्यास यही संदेश देना चाहते है कि आँखों की पट्टी तो केवल प्रतीक मात्र है एक वस्तु को पाने की लालसा में यदि दूसरे दायित्वों कोअनदेखा किया जावेगा तो परिणाम दुखद एवं हृदयविदारक ही होगा। अपने पति के प्रेम की एक मात्र अधिकारिणी बनने की लालसा लिए ही गांधारी ने अपने आँखों पर पट्टी बांध ली थी। इसी कारण उन्होनें अपने पुत्रों को उपेक्षित किया था कि इसका परिणाम उन्हें पुत्रशोक के रूप में भुगतना पडा। गांधारी की एक भूल यह थी किउन्होनें अपने भाई शकुनि को लम्बे समय तक अपने साथ रखा।

यधपि शकुनि अपने भांजो का बुरा नही चाहते थे, तथापि अति महत्वकांक्षा ने उन्हें धूर्त एवं षडयन्त्रकारी और चहेते भांजों को अभिमानी एवं हठी बना दिया था।[25]

इस प्रसंग के माध्यम से व्यासजी यही शिक्षा देने चाहते हैं कि जैसे सोना सुनार के घर ही अच्छा लगता है उसी प्रकार जिसका स्थान जहाँ हो वही रहे तो वह सुशोभित होता है, अन्यथा यह सब घुसपैठ की तरह हो जाता है जिससे कोई बाहरी व्यक्ति अपने घर में आकर आपसी परम्पराओं को परिवर्तित करने की कुचेष्टा करे इसके परिणाम भी दु:खमयी होते हैं। शकुनि द्वारा किये गये षड्यन्त्रों का परिणाम सम्पूर्ण विश्व जानताहै ।

अत: गांधारी के माध्यम से व्यास जी आधुनिक नारी को यह संदेश देना चाहते हैं कि व्यक्ति को स्वयं के निर्णयों के लिए किसी पर आश्रित नहीं रहना चाहिए, सगे भाई पर भी नहीं स्वयं को इतना सक्षम व सामर्थ्यवान बनाना चाहिए कि वह स्वयं के साथ परिवार के निर्णय लेकर अपने परिवार को उन्नत्ति के मार्ग की ओर अग्रेषित कर सके।

कुन्ती के माध्यम से व्यासजी का आधुनिक नारी का संदेश

पांडवो की माता कुंती श्रेष्ठ व्यक्तित्व की स्वामिनी थी। कहा जाता है कि व्यक्ति गलतियों से ही सीखता है और वह गलतियाँ पुन: न हो ऐसा प्रयास करता है। कुंती द्वारा अज्ञानतावश हुई भूलों से भी वेदव्यास हमें यही संदेश देना चाहते है कि उनके साथ जो हुआ उसकी पुनरावृति न हो।

ज्ञातव्य है कि कुंती की सेवा से प्रसन्न होकर महर्षि दुर्वासा ने उन्हें वशीकरण मंत्र प्रदान किया था। कुंती उस समय नवीन उत्साह सम्पन्न नवयुवती थी। महर्षि द्वारा दिये गये मंत्र की परीक्षा हेतु उन्होने भगवान सूर्य नारायण का आह्वान किया और मंत्र के प्रभाव से न चाहते हुए भी कर्ण को जन्म दिया। परन्तु लोकलाज के भय से नवजात बालक को जल में बहा दिया था।[26]

महर्षि व्यास ने कुती के चरित्र के माध्यम से आज की नारी को यह संदेश दिया है कि आधुनिकता की चादर ओढ़े कई बार युवतियां नवीन वय से सम्पन्न होने पर स्वयं के संस्कारों को भुलाकर युवावस्था में मदोन्मत होकर अनचाही भूल कर बैठती है जिसके परिणाम दु:खद होते है। या तो उन्हें समाज में अपमानित होना पडता है या अवांछित संतानों को कर्ण की तरह बेसहारा छोड़ दिया जाता है। आधुनिक युग में ऐसे किस्से देखने एवं सुनने में आते रहते है। महर्षि व्यास ने युवा वर्ग को चेताया है कि युवावस्था के मद मे अति उत्साहित होकर परिणामों को बिना सोचे विचारे कभी निर्णय नहीं लेना चाहिए।

यौवन एक ऐसी अवस्था है जिसमें पथ भ्रमित होने के अवसर अधिक होते है। अत: जनसाधारण एवं अभिभावकों को चाहिए कि वे आधुनिकता के चक्कर में अपनी संतानों को उतने ही भौतिक संसाधन उपलब्ध उपलब्ध कराये जितनी कि उन्हें आवश्यकता हो। आज के मोबाइल एवं इन्टरनेट के युग में वैसे ही तकनीकों का जमकर दुरूप्रयोग हो रहा है। ऐसे में आज्ञाकारी व संस्कारी संतान कब पथ भ्रमित हो जाये यह कहना मुश्किल है। दुवार्सा ऋषि द्वारा बालिका कुंती को दिये गये मंत्र के दुरूप्रयोग से ही कर्ण का जन्म हुआ था। अत: व्यासजी अपने काव्य के माध्यम से यही संदेश देना चाहते है कि संसाधनों का दुरूप्रयोग नहीं होने चाहिए। कुंती के वचनों की रक्षा के लिए युधिष्ठिर ने समस्त पाण्डवों के साथ द्रौपदी के विवाह का निर्णय लिया था। व्यासजी ने कुंती के माध्यम से एक और संदेश दिया है कि नारी में सही गलत का निर्णय चलने की क्षमता होनी चाहिए। कुंती जानती थी कि उनके पुत्र महान् पराक्रमी है तथापि वनवास एवं अज्ञातवास के पश्चात् पांडव दिशाहिन हो गये थे वे यह भीजानती थी कि पुत्रवधू द्रौपदी कभी लक्ष्यच्युत नहीं हो सकती है[27] कि उस समय कुंती अपने पुत्रों से कहती है कि तुम द्रौपदी के बताये गये मार्ग पर चलो।[28] इस प्रसंग के माध्यम से व्यास जी ने आधुनिक नारी को यह संदेश दिया कि तटस्थ भाव से प्रत्येक पक्ष का अवलोकन करना चाहिए तभी आप उचित व अनुचित का निर्णय लेने में सक्षम हो सकेगे अन्यथा मोहग्रस्त होकर अवनति की ओर अग्रसर होने के लिए बाध्य होना पड़ेगा।

सुभद्रा के माध्यम से आज की नारी को संदेश

सुभद्रा अर्जुन की पत्नी व द्रौपदी की सौतन थी तथापि सुभद्रा का चरित्र इतना दृढ व संयमित था कि उन्होने पाण्डवों और द्रौपदी की अनुपस्थिति में स्वयं के तथा द्रौपदी के पुत्रों का समुचित लालन – पालन करके उन्हें अस्त्र – शस्त्र तथा सदाचार की शिक्षा दिलाकर एक श्रेष्ठ योद्धा बनाया था।'[29]

आज वर्तमान में सुभद्रा जैसे चरित्रों की अत्यधिक आवश्यकता है। आज की नारी ही नारी की दुश्मन बनी हुई है। खुद को श्रेष्ठ साबित करने की चाह एवं अभिमान में नारी अपने समक्ष अन्य नारी को देखना भी नहीं चाहती. मैत्री भाव स्थापित होना तो दूर की बात है।

व्यासजी ने सुभद्रा के माध्यम से यह संदेश दिया की सुभद्रा ने सौतन जैसे प्रतिद्वन्दी रिश्ते को भी अत्यन्न प्रेम सहजता व जिम्मेदारी पूर्वक निभाया था वैसी ही संयम एवं दायित्व की भावना व्यासजी आज की आधुनिक नारी में भी देखना चाहते है। वेदव्यास जी यह संदेश देते है कि यदि प्रेमभाव से रहोगे तब ही अच्छे परिणाम मिलेगे, अन्यथा कौरव – पाण्डव आपस में भाई – भाई होने पर भी गृहक्लेश के कारण लड़े थे और अभिमन्यु एवं दौपदी के पाँचो पुत्र भ्रातृत्व का उदाहरण बन गये थे।[30] यह सभी परिणाम नारी के सर्मपण पर ही निर्भर करते है।

द्रौपदी के चरित्र के माध्यम से व्यासजी का संदेश

आज वर्तमान युग में कन्याभूण हत्या जैसे निर्गम व घृणित कार्य के दर्शन निरन्तर होते रहते हैं। यदि समय रहते हमारा समाज नही जागृत हुआ तो द्रौपदी के पाँच – पाँच पति वाली स्थिति शीघ्र ही उत्पन्न हो जायेगी और स्त्री केवल भोग की वस्तु बनकर रह जायेगी। प्रत्येक स्त्री द्रौपदी की तरह सामर्थ्यवान् नही हो सकती जो पाँच भिन्न – भिन्न विचारो वाले व्यक्तियों के साथ सामजस्य बिठा सके।[31] आज की आधुनिक नारी तो एक पति के साथ ही वैचारिक तालमेल बिठाने में असक्षम प्रतीत होती है और स्थिति अलगाव तक पहुँच जाती हैं। एक आम नारी में द्रोपदी जैसा साहस व दृढनिश्चय होना मुश्किल है। वेदव्यासजी यही संदेश देना चाहते कि समय रहते इस कुव्यवस्था को नहीं रोका गया तो परिणाम भयानक हो सकते है।

द्रौपदी के चरित्र के माध्यम से वेदव्यास जी ने कहा है कि नारी को हर स्थिति में पुरूष का साथ देना चाहिए। पुरूष के साथ कंधे से कंधा मिलाकर अपने परिवार की उन्नती के लिए आगे बढ़ना चाहिए। परन्तु आज की स्थिति थोड़ी सी अलग है आज पुरूष के साथ चल रही है तो कुछ तो आगे भी निकल चुकी है, परन्तु इस स्थिति में वे अपने पारिवारिक दायित्वों को अनदेखा कर देती है। स्मरण रहे कि द्रौपदी रण में पाण्डवों के साथ नहीं गई थी। अत: यह जरूरी नही है कि वे अपने पति का साथ देने के लिए घर से बाहर ही निकला जाये। एक आम स्त्री की तरह घर पर रहकर भी वह अपने प्रेरक मनोबल स अपने परिवार की सहायता कर सकती है। अपनी संतानों को समुचित संस्कार देकर उनकी आदर्श बन सकती है। व्यासजी यही संदेश देते है कि आधुनिकता की खीचतान में नारी अपने परिवार को कभी अनदेखा नहीं करे क्योंकि जीवन की संध्या में यही परिवार हमारे साथ हमारा साथ देने के लिए खड़ा रहता है।

अन्त में वेदव्यास जी की शिक्षा और संदेशो को शब्दो से बाँधना अत्यन्न दुर्लभ है। इन्हे आत्मसात करने से ही हम भविष्य में उत्पन्न होने वाली आंशकाओ से स्वयं को व स्वय के परिवार को दूर रख सकते है।

व्यासजी के इन सभी संदेशो मे पारिवारिक एकता है। इसी एकता को बनाए रखने के लिए व्यासजी ने महाभारत का विषय पारिवारिक कलह लिया ताकि आने वाली पीढ़ियाँ पारिवारिक कलहों के हृदय विदारक परिणामों से अवगत होकर पुन: ऐसी स्थिति उत्पन्न न होने देवे।

सन्दर्भ

1. महाभारत, प्रथम खण्ड, आदिपर्व. अध्याय 62, श्लोक 53, पृ. 210
2. देवी भागवत, पहला स्कन्ध,
3. उपाध्याय, बलदेव, संसा. का इतिहास, पृ. – 76–77

4. महाभारत, आदिपर्व, अध्याय 63. श्लोक 86
5. महाभारत, शांतिपर्व, अध्याय 349, श्लोक 5
6. सर्व शास्त्रार्थ तत्वज्ञ पराशरसुतं प्रभुम । ब्रह्मपुराणम, अध्याय 1, श्लोक 29
7. पराशर सुतोव्यास: कृत्वा पौराणिकी कथाम। वायपुराणम, अध्याय 2 श्लोक 11
8. पराशरसुतो व्यासं, कृष्णद्वैपायनोऽभवत्। कर्मपुराणम अध्याय 522, श्लोक 9
9. पराशर्य महाभागम् यत्वं प्रच्छसिमामिह। देवीभागवत, अध्याय 1, श्लोक 41
10. कृतस्वन्दनांश्चाहं कुतासन परिग्रहान्। विष्णु पुराण, अध्याय 2 श्लोक 101
11. यच्दव: फलमेवेह जनुषों में कृतार्थता। वायु पुराण अध्याय 2 श्लोक 7
12. एवमुक्तं पुरा विप्रा व्यासेनामित तेजसा:। पदम पूराण अध्याय 13. श्लोक 1
13. मेरूभंगे महारम्य व्यास सत्यवती सुत:। देवीभागवत, अध्याय 1. श्लोक 11
14. महाभारत, आदिपर्व, अध्याय 117, श्लोक 7
15. सत्यवती दृष्टाम लब्धवा वरमनुत्तमम्। अध्याय 63, श्लोक 83-84
16. देवी भागवत, अध्याय 1, श्लोक 1.23.28
17. महाभारत, शांति पर्व, अध्याय 323, श्लोक 27
18. महाभारत, आदिपर्व, अध्याय 1, श्लोक 104
19. महाभारत, शांतिपर्व, अध्याय 333. श्लोक 22
20. तसोरूत्पादयापत्यं समथोह्यासि पुत्रक। महाभारत, आदिपर्व, अध्याय 104, श्लोक 38
21. महाभारत, अध्याय 104, श्लोक 39-41, पृ. 378
22. देवी भागवत पुराण 1/3/24-33
23. तत: वा पदृमादाय कृत्वा बहुगुणां तदा। बवन्ध नेत्रे स्वे राजन् पतिव्रतपरायणा।।
महाभारत, आदिपर्व अध्याय 109 श्लोक
24. न्यूनमाचरित पाप मया पूर्वेषु जन्मासु।या पश्यामि हतान् पुत्रान् पौत्रान् भ्रातृथ्य माधव
वही, स्त्रीपर्व अध्याय 16 श्लोक 60
25. अंह तु तद विजनामि विजोतुं येन शक्यते। युधिष्ठर स्वयं राजस्तन्तिबोध जुषरव च ।।
26. तस्याक्षसे कुशलो राजन्नादास्येदऽहम सशयम् । राज्य श्रिय च ता दीप्तां त्वदर्थ पुरुषर्षभ वही, सभापर्व 48, 17.21
27. वही, आदिपर्व 110, 6-22
28. सर्वेषामहिषी राजन् द्रौपदी नो भविष्यति।एवं प्रत्याहृत पूर्व मम मात्रा विशापते ।। वहीं, आदिपर्व 194 23
29. गत्वा बूहि महाबाहो सर्वशंस्त्र भ्रता वरम् । अर्जुन पाण्डवं वीर द्रोपद्या: पदवी चर।।वही, उधोगपर्व 90, 30
30. अभिमन्यु रिव प्रीता द्वारवत्यां रता भ्रशम । त्वामिवेषां सुभद्रा च प्रीत्या सर्वात्मना स्थितावही, वनपर्व 235, 12
31. तैष्व प्रमोदन तथा करोति तथैव भूयश्च तथा सुभद्रा ।। वही, बनपर्व 183, 27